शोध मंथन Vol. XIV No.II Apr.-June 2023 ISSN: (P) 0976-5255 (e) 2454-339X
Impact Factor 8.870 (SJIF)

भारतीय चित्रकला एवं लोककला में आभूषणों का इतिहास

डॉ0 मनोज कुमार
ईमेलः *manojgbss0@gmail.com*

प्राप्तिः 28.04.2023
स्वीकृतः 20.06.2023

28

सारांश

आभूषण श्रृंगार का महत्त्वपूर्ण उपकरण है। श्रृंगार की प्रबल भावना के कारण ही आभूषणों का निर्माण तथा उसमें निरन्तर विकास हुआ। यही कारण है कि विश्व के सभी देशों, जातियों एवं सभ्यताओं में आभूषण धारण करने की परम्परा प्रारम्भ से मिलती आई है। आभूषण नख से शिख तक के सभी अंगों में धारण किये जाते रहे हैं। मनुष्य इसके निर्माण के माध्यम में किसी धातु विषेश के प्रति आग्रह नहीं रहा है। मनुष्य समय व परिस्थितियों के आधार पर ही इनके उपादान का चुनाव करता आया है। यही कारण है कि घास, पुष्प, हड्डी एवं शीशे से लेकर कास्य, पीतल, चाँदी, सोने एवं रत्नों आदि तक के आभूषणों का प्राचीन काल से निर्माण होता आया है। भारत में प्राचीन काल से ही सभ्यता के विभिन्न स्तरों में आभूषणों के प्रति लोगों में विषेश सम्मान रहा है।

मुख्य बिन्दु

आभूषण, अलंकार, जातियों, प्राचीन।

''आभूषण'' का शाब्दिक अर्थ है– आ समन्तात् भूशणम् अलंकरणम् अर्थात् जो शरीर की शोभाज्ञ को समग्र रूप से बढ़ाये, उसे आभूषण कहते हैं। आभूषण के प्रति मनुष्य का विशेशतः नारी का आकर्षण आदि काल से रहा है। भूषण, आभूषण, अलंकार, आभरण प्रायः समानार्थक शब्द हैं तथा इनका प्रयोग वैदिक युग से ही स्वर्ण, रत्न या मणि आदि से बने हुए अलंकारों के लिए किया जाता रहा है।[1] साधाराण भाषा में जो किसी भी वस्तु को अलंकृत कर दे, गुणों में वृद्धि करे अथवा गुणवर्द्धन सहायक हो उसे 'आभूषण' कहते हैं। अलंकरण का अर्थ– काया को सजाना। अलंकरण के बिना यह काया अधूरी है। आभूषण धारण करने से काया को एक रूप मिल जाता है वह दृश्यमान और आकर्षण हो जाती है।

आभूषणों के प्रयोग का इतिहास बहुत प्राचीन है। हम कह सकते हैं कि प्रागैतिहासिक काल से ही आभूषणों का प्रचलन मानव सभ्यता में देखा जा सकता है। सर्वप्रथम मनुष्य प्रकृति से प्राप्त सामग्री के उपयोग से ही आभूषण निर्मित करता था। जैसे–सूखी घास, पत्ते, बीज, फल, हड्डी, हाथी दाँत, शीशे के मोती, बहुमूल्य पत्थर आदि। भारत में प्राचीन काल से ही सभ्यता के विभिन्न स्तरों के आभूषणों के प्रति लोगों में विषेश रूचि रही है। पूर्व पाषाण काल में पत्थर से निर्मित गहने पहने जाते थे। इसके पश्चात् ताम्र युग में धातुओं की खोज होने पर धातुओं से निर्मित आभूषण प्रयोग में लाने लगे। आभूषणों के निर्माण

हेतु सोने–चाँदी व मनकों के टुकड़ों को पिरोकर शिरोभूषण, कर्णाभूषण, गले के आभूषण व हाथ के आभूषण बनाए गए। इस प्रकार हम मान सकते हैं कि आभूषण मनुश्य सौन्दर्य वृद्धि हेतु एक महत्वपूर्ण उपकरण है। मनुष्य आभूषणों का प्रयोग सौन्दर्य प्रसाधन के साथ–साथ धार्मिक व अन्धविश्वास हेतु भी करता आया है। इस कारण समय–समय पर आभूषणों के अभिकल्पन (अलंकरण) में परिवर्तन होता रहा है।[2]

श्रृंगार नारी का सर्वोपरि अधिकार है। प्राचीन काल से ही आभूषण और अलंकरण नारी के देह को सुसज्जित करते आये हैं। स्वर्णकारों और हीरे जवाहरात का काम हमारे देश की सबसे प्राचीन कला है, जो आभूषणों के रूप में चली आ रही है। प्राचीन भरहुत, साँची, अमरावती, अजन्ता के चित्र और मूर्तियाँ इस बात का प्रमाण देती हैं। ताँबा, लोहा, हाथी दाँत, पत्थर, सोना, चाँदी, मणि उनके अलंकरण के माध्यम थे।[3]

जीवन की भौतिकता से जुड़े हुए आभूषणों का ऐतिहासिक अध्ययन सभ्यता और संस्कृति के संदर्भ में अपना महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। भारतीय संस्कृति के संदर्भ में इसका और भी अधिक महत्व बढ़ जाता है। भारतीय आभूषण जहाँ समाज के आर्थिक, सामाजिक तकनीकी पक्ष पर प्रकाश डालते हैं, वहीं जीवन के आध्यात्मिक, मनोवैज्ञानिक पक्ष तथा धार्मिक, दार्शनिक सामाजिक मान्यताओं की सशक्त अभिव्यक्ति भी व्यक्त करते हैं।

मनुष्य प्राचीन काल से पाषाण प्रतिमाओं को सौन्दर्य प्रदान करने हेतु उनमें आभूषण बनाया करता था। मौर्य शुंग युग में बनायी जाने वाली प्रतिमाओं में अलंकारों की बहुलता दिखायी देती है किन्तु गुप्त युग में ये अलंकार कम होता गया। इन प्रतिमाओं से उस युग की जानकारी भी प्राप्त होती है कि उस समय किस प्रकार के आभूषण प्रचलित थे। कुषाण युग के आभूषण शुंग युग की तुलना में विकसित नागरिक रूचि पर अधिक बल देते थे। इस युग के शिल्पियों द्वारा उस समय के धनवान व राजसी वर्ग में प्रचलित आभूषणों के आधार पर ही यक्ष–यक्षिणी, देव समुदाय तथा राजवर्ग की मूर्तियों में आभूषण का अंकन किया करते थे। कला के इन दो पृथक माध्यमों में आभूषणों के अंकन में अन्तर का कारण भिन्न जीवन बोध तथा आदर्शों में भिन्नता रही होगी। शुंग युगीन कला के आभूषण ग्रामीण एवं जनसाधारण के निकट दिखायी देते हैं। जबकि इसके विपरीत कुशाण युग के आभूषण विलासपूर्ण तथा भव्य हैं।[4]

आभूषणों से सम्बन्धित धार्मिक तथा सांस्कृतिक मान्यताओं के कारण प्राचीन समय में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र – सभी वर्ग के लोग प्रमुख संस्कारों तथा उत्सवों पर आभूषण पहनते होंगे। उस समय धनी तथा निर्धन वर्ग दोनों के द्वारा आभूषण पहने जाते थे। परम्परागत भारतीय समाज में आभूषण धारण करना धार्मिक एवं सामाजिक आवश्यकता है। इसीलिए इन प्राचीन विधि–विधानों के आधार पर विवाहादि संस्कारों में निरन्तर इनका उपयोग किया जाता है। मध्य युगीन सामन्तवादी समाज में आभूषण वैभव प्रदर्शन का एक माध्यम बन गया।

हड़प्पा और मोहनजोदड़ो सभ्यता में स्वर्ण, रजत, ताम्र, हाथी दाँत, चीनी मिट्टी और मनकों से बने आभूषण प्रचलित थे। मोहनजोदड़ों की खुदाई में मिली कास्य से बनी एक नर्तकी की मूर्ति प्राचीन आभूषण कला का बेहतरीन नमूना है। सिंधु घाटी सभ्यता के लोग ने सर्वप्रथम धातु और टेराकोटा से बनने वाले आभूषणों के लिए सांचे बना लिए थे। यहाँ से मिले स्वर्ण अभूषणों में मालाएँ, कड़े, अंगूठी, शीशाभूषण, कमरबन्द आदि प्रमुख हैं।

वैदिक कालीन आभूषणों का अलग से एक अध्याय में वर्णन मिलता है। ब्राह्मण और आरण्यक ग्रंथों में भी आभूषणों के उल्लेख मिलते हैं जैसे प्रतिसर, खादि, वलय आदि। इससे वैदिक काल पश्चात् आभूषणों के विकास का पता चलता है। रामायण और महाभारत काल में धातु के आभूषणों के साथ ही पुष्प, बीज, काष्ठ, सीपी, मूंगा, कौड़ी तथा जीव–अस्थियों से निर्मित आभूषणों का उल्लेख मिलता है।[5]

प्राचीन काल में कुण्डल, मेखला, चूड़ामणि, मुक्तहार, केयूर, वलय, नुपूर आदि प्रमुख आभूषण थे। भारत में मगध साम्राज्य (545 ई0पू0) के पश्चात् साम्राज्यवादी राजतंत्र शुरू होता है। इस दौरान सिकन्दर के आक्रमण ने भारत में विदेशी और भारतीय संस्कृति के समन्वय का बीजारोपण किया जो मौर्यकाल तक फला–फूला। धनिक लोग रत्नों और सोने की कढ़ाई के सूती, रेशमी और मलमल वस्त्र पहनते थे। हाथी–दाँत के बने आभूषणों का प्रचलन भी था। सजने–संवरने के लिए सौन्दर्य प्रसाधनों का इस काल में भरपूर महत्व दिया जाता था। स्त्रियाँ ही नहीं पुरूष भी विभिन्न प्रसाधनों और आभूषणों से सुसज्जित होते थे। भरतमुनि के नाट्यशास्त्र में स्त्रियों द्वारा पहने जाने वाले अनेकों आभूषणों का उल्लेख किया है। पाणिनी ओर पतंजलि ने भी अपने ग्रंथों में उस समय में प्रचलित आभूषणों का उल्लेख किया गया है। इनमें स्त्री के हाथ के आभूषणों में कटक, मुद्रा, अंगुलियक, हथेली में हस्तपत्र, सुपूरक, कलशाखा, मस्तक पर ललाटिका, कुम्बा, भुजाओं में रूचक, वलय आदि आभूषणों का विवरण मिलता है।[6]

जैसे–जैसे समय आगे बढ़ता गया आभूषणों के रूप और नामों ने भी अपनी स्थानीय विशेषता ले ली। सिर में बांधो जाने वाले आभूषण में बोर, शीशफूल, राखड़ी और टिकड़ा, सिरपेंच नाम पुरालेखों में वर्णित हैं। गले तथा वक्षस्थल के आभूषणों में हँसुली, तिमणियाँ, चन्द्रहार, कण्ठमाला, चम्पकली, हंसहार, सरी, कण्ठी, झालर, कानों के आभूषणों में कर्णफूल, पीपलपत्रा, फूल झुमका तथा लटकन आदि। हाथों में कड़ा, कंकण, चूड़ियाँ तथा अंगुलियों में बींटी, दामणा, हथफूल तथा पैरों में कड़ा, लंगर, पायल, पायजेब, नुपूर, घुँघरू, झांझार आदि पहने जाते थे। नाक में नथ, कांटा, बेसर, बुलाक, बाली आदि से आभूशित किया जाता था। कमर में मेखला और करधनी पहनी जाती थी। इन सभी आभूषणों को हर वर्ग की स्त्रियाँ पहनती थी, अन्तर हेाता था तो सिर्फ धातु का। भारतीय चित्रकला में सैन्धव सभ्यता से लेकर विभिन्न शैलियों के द्वारा उस समय प्रचलित आभूषणों से समाज के रहन–सहन व उस युग में किस धातु का अधिक प्रयोग किया जाता था उसका सम्पूर्ण ज्ञान हमें चित्रकला के माध्यम से प्राप्त होता है।

प्रागैतिहासिक काल में आदिमानव आभूषण के रूप में प्रकृति के विभिन्न संसाधनें का प्रयोग करता था। जिसमें गेरू से वह अपना चेहरा रंगा करता था और अपनी प्रिया के लिए पत्तों के वस्त्र और हड्डियों के आभूषण बनाता था। प्रागैतिहासिक काल के बाद आभूषणों का अत्यन्त सुन्दर प्रमाण हमें सिन्धु घाटी सभ्यता में देखने को मिलते हैं। जिसमें मनकों की लम्बी–लम्बी लड़ियों से निर्मित मालाएँ इस सभ्यता की देन हैं। कर्णफूल, चूड़ियाँ, मुद्रिका, बाजूबन्द आदि इस काल के प्रमुख आभूषण थे। तत्कालीन स्त्री व पुरूष दोनों ही सौन्दर्य वृद्धि हेतु आभूषणों का प्रयोग करते थे। परन्तु पुरूष आकृतियों की तुलना में स्त्री आकृतियाँ अधिक आभूषण धारण करती थीं। आभूषणों के निर्माण में कास्य, ताँबा, सोना, चाँदी मिश्रित धातु या विविध प्रकार के पत्थर का प्रयोग किया जाता था। अन्य धातुओं की अपेक्षा सोना और चाँदी का प्रयोग कम होता था। जबकि रत्नों का प्रयोग बिल्कुल ही नहीं हुआ था। आभूषणों के निर्माण में मनकों का सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्थान था। सम्भवतः चन्हुदाड़ों मनकों बनाने का प्रमुख केन्द्र था। जहाँ से मनके सुमेर तथा अन्य

देशों को भी भेजे जाते थे।[7] ये मनके सोने, चाँदी, ताँबा, पत्थर, पक्की मिट्टी, शंख, अगेट आदि सामग्री से विभिन्न आकार–प्रकार में बनाये जाते थे। हड्डी तथा हाथी दाँत के मनकों के भी उदाहरण मिलते हैं। मनकों को पिरोने के लिए डोरी का प्रयोग किया जाता था। बड़े आकार के मनके चूना या अलबास्टर पत्थर से भी बनाये जाते थे। इन मनकों को रंगने की भी प्रथा थी। लोथल से रंग–बिरंगे मनके मिले हैं। आभूषणों के लिए रंगे हुए मनकों का ही प्रयोग किया जाता था। सादे मनकों का प्रयोग विषेश रूप से ताबीजों के लिए होता था। श्वेत रंग के अधिकांश मनके स्टेटाइट पत्थर के बने हैं।[8]

मनकों को वृत्त, तीन–पत्तियाँ, लहरियाँ, बिन्दु, टेढ़ी–मेढ़ी रेखाओं आदि नमूनों में अलंकृत किया जाता था। स्टेटाइट के कुछ मनके तीन–पत्तियों नमूने में अलंकृत है। एक गोलाकार मनकों के किनारों को लहरियों से एक अकीक से बने मनकों को श्वेत रेखाओं से अलंकृत किया जाता था। मोहनजोदड़ों से ऐसे मनकों के कुछ ही उदाहरण मिले हैं। इस प्रकार के मनके बनाने की प्रथा आज भी भारत में विद्यमान है। प्रायः लाल रंग के मनकों को श्वेत और श्वेत रंग के मनकों को काले रंग से अलंकृत किया जाता था। सैन्धव निवासी मनकों को बनाने और उन्हें अलंकृत करने की कला में पूर्णतया निपुण थे। मनकों का प्रयोग विशेश रूप से हार बनाने के लिए किया जाता था।[9] सैन्धव निवासियों द्वारा प्रयोग में लाये जाने वाले विभिन्न आभूषणों का अलग–अलग विस्तारपूर्वक वर्णन इस प्रकार है।

शिरोभूषण

सिन्धु घाटी सभ्यता में स्त्री तथा पुरूष माथे पर सोने–चाँदी से निर्मित एक पट्टिका पहनते थे। सम्भवतः इसका प्रयोग केशों को यथास्थान व्यवस्थित रखने के लिए किया जाता था। केशों को अलंकृ त करना भी इसका एक प्रयोजन हो सकता है। कुली सभ्यता से प्राप्त एक पुरूष मृण्आकृति के माथे पर पहनी गई पट्टिका कन्धे तक लटकती दिखाई गयी है। ये पट्टिकाये माथे से होती हुई पीछे की ओर ले जाकर बाँधी जाती थी। इनमें बाँधने के लिए छिद्र होते थे।[10]

मोहनजोदड़ो से सोने की एक ऐसी पतली पट्टिका प्राप्त हुई है। जिसके दोनों सिरों पर एवं मध्य में छिद्र हैं। इस पट्टिका को कैसे पहना जाता था। इसका उदाहरण हमें मोहनजोदड़ों की योगी की प्रतिमा में देखा जा सकता है। इन पट्टिकाओं को कभी–कभी मनकों द्वारा अलंकृत भी किया जाता था। ये पट्टिकायें किनारे की ओर क्रमशः पतली होती जाती थी। अधिकांशतः ये पट्टिकायें सोने व चाँदी की धातु से निर्मित होती थी। शिरोभूषण में पट्टिकाओं के अतिरिक्त मुकुट भी पहने कुछ मृण्मूर्तियाँ प्राप्त हुई है। मोहनजोदड़ो से प्राप्त टेराकोटा से निर्मित मातृदेवी की मूर्ति जिसके सिर पर एक पंखेनुमा मुकुट (ताज) पहने दर्शाया गया है तथा जिसके निचले भाग पर एक फीता बंधा हुआ है। यह फीता सोने व चाँदी से निर्मित होते थे।[11]

एक अन्य मृण्मूर्ति जिसमें सिर पर अंकित शिरोभूषण को पंखेनुमा मुकुट के साथ चार बड़े–बड़े फूलों से अलंकृत किया गया है। मोहनजोदड़ो से प्राप्त मूर्तियों के द्वारा जो शिरोभूषण धारण किए गए उनमें अधिकतर पंखेनुमा मुकुट व पट्टिका विषेश है। पंखेनुमा मुकुट देवी–देवताओं व उनके श्रेष्ठ नागरिक को पहने बनाया गया है। हड़प्पा से कुछ कोणोकार आभूषण भी मिले हैं जिन्हें देखने से प्रतीत होता है कि स्त्रियाँ अपने माथे को अलंकृत करने के लिए इसका प्रयोग करती थी। ये आभूषण सोने, चाँदी, स्टेटाइट, मिट्टी एवं शंख में बने होते थे।

कर्णाभूषण

सिन्धु घाटी सभ्यता में पुरूषाकृतियाँ कर्णाभूषण धारण करते नहीं दिखाई देते। कर्णाभूषणों में चक्राकर कुण्डल तथा कर्णफूल विषेश लोकप्रिय थे। मृण्मूर्तियों में अधिकांशतः कर्णभूषण दिखाई देते हैं। कर्णाभूषण पहनने के लिए कानों में छिद्र करने की प्रथा थी। हड़प्पा से कई प्रकार के कर्णाभूषण मिले हैं जिनमें वर्तमान कर्णफूल के समान और लटकने वाले कर्णाभूषण प्रमुख हैं। कुछ कर्णाभूषणों के मध य छिद्र भी मिले हैं। कर्णाभूषण पर विभिन्न प्रकार के अलंकरण भी हैं। ये आभूषण, स्टेटाइट, तांबे या कांसे से बनते थे। हड़प्पा से तीन कोण वाले कर्णफूल के समान कर्णाभूषण भी मिले हैं। मोहनजोदड़ों से भी ऐसे ही कर्णाभूषण प्राप्त हुए हैं। गोल कअन जैसे भी कुछ कर्णाभूषण मिले हैं जो सामान्यतः चपटे आकार के हैं।[12]

हड़प्पा की तुलना में मोहनजोदड़ो से बहुत कम कर्णाभूषण प्राप्त हुए हैं। आकार–प्रकार में ये अधिकांशतः हड़प्पा के ही समान हैं। मोहनजोदड़ों के कर्णाभूषण अधिकांश चक्राकर सोने, चाँदी, काँसा, ताँबा एवं तार के बने हैं। मोहनजोदड़ों से चाँदी के कर्णफूल भी प्राप्त हुए हैं। साथ ही कुछ कीलाकार और कुछ कोणाकार कर्णाभूषण भी मिले हैं। जिनके किनारे पर मनके लगे हैं। ये आभूषण इतनी सफाई से बनाये गये हैं कि देखने में सांचे से बने प्रतीत होते हैं। हड़प्पा और मोहनजोदड़ो से कुछ पत्थर के झुमके भी मिले हैं। इन झुमको के ऊपरी भाग में छिद्र होता था जिसमें तार लगा रहता था। इसी तार की सहायता से आभूषण कान से लटकाया जाता था। हड़प्पा और मोहनजोदड़ो से प्राप्त टेराकोटा की मातृदेवी की अनेकों मूर्तियाँ प्राप्त हुई हैं। इन मूर्तियों के अधिकांश कर्णाभूषण खण्डित हो चुके हैं। सिन्धु घाटी सभ्यता (हड़प्पा) से प्राप्त एक स्त्री की मूर्ति जिसके कानों में चेहरे से बड़े आकार के कर्णाभूषण बनाए गए हैं। यह कर्णाफूल झुमके समान हैं। जिसके ऊपर गोल हुक तथा नीचे बड़े–बड़े मनके लगाए गए हैं।[13]

कण्ठाभूषण

गले के अधिकांश आभूषण मनकों से बने हैं। धातुओं की पट्टियों से भी हार बनाये जाते थे। मृण्मूर्तियों में इस प्रकार के आभूषण स्पष्ट मिलते हैं। मोहनजोदड़ो में स्त्रियाँ सम्भवतः गले में तीन आभूषण पहनती थीं। इनमें एक आभूषण गले से कसा हँसुली जैसा होता था जबकि इसके अतिरिक्त अन्य दो आभूषण हार के समान कुछ गले के नीचे और दूसरा वक्षस्थल तक लटकता दिखाया गया है। कुछ आकृतियों में केवल दो आभूषण ही प्राप्त होते हैं। सैन्धव–सभ्यता के उत्खनन से चाँदी के पात्र में रखे हुए आभूषण भी प्राप्त हुए हैं, इनमें एक हार हल्के हरे रंग के चमकदार यशब के मनकों से निर्मित है। मोहनजोदड़ो से प्राप्त इस हार में यशब के मनके प्रत्येक ओर से गोलाकार स्वर्ण के मनकों से एक–दूसरे से विभक्त किया गया है। हार के सामने की ओर गोमेद, जैस्पर व यशब के पत्थर के चार लटकने स्वर्ण के एक मोटे तार की सहायता से लटकते हुए बनाए गए हैं। इनको इतनी सफाई से जोड़ा गया है कि इनमें जोड़ कुछ मनकों में देखा जा सकता है। हड़प्पा से प्राप्त स्वर्ण के पतले तारों में पिराया स्वर्ण मनकों से युक्त यह हार चार स्वर्ण लड़ियों को एक साथ जोड़कर बनाया गया है। मोहनजोदड़ो से प्राप्त एक अन्य हार जिसमें स्वर्ण के चपटे व छोटे–छोटे गोलाकार के मनकों के साथ बीच–बीच में गोमेद, फिरोया तथा फेयन्स के मनकों से बनाया गया है।[14]

उपरोक्त उदाहरणों से स्पष्ट है कि विभिन्न आकार वाले मनकों से कई–कई लड़ियों वाले हार बनाये जाते थे। विभिन्न लड़ियों को एक–दूसरे से अलग रखने के लिए एक विषेश प्रकार के आभूषण का प्रयोग किया जाता था। इन आभूषणों के निर्माण में विभिन्न सामग्री–मिट्टी, पत्थर, ताँबा, सीपी, काँसा, सोना इत्यादि का प्रयोग होता था। मोहनजोदड़ों से प्राप्त मृण्मूर्तियों में भी आकृतियों के गले में एक कंठनुमा हार पहने बनाया गया है। इसके अतिरिक्त चार हार गले से नाभि तक बनाए गए हैं यह सभी हार साधारण रस्सीनुमा आकृति के बनाए हैं। जिनको अलंकृत करने हेतु गोल मनकों का प्रयोग किया गया है। अन्य मृण्मूर्ति द्वारा गले से चिपका हुआ दो पट्टियों का हँसुलीनुमा हार पहना है तथा एक हार जिसमें गोल पेंडेंट भी अलंकृत है। मोहनजोदड़ो से एक छोटे आकार का स्त्री मस्तक भी प्राप्त हुआ है जिसके गले में तीन पट्टियों वाल कण्ठहार जिसमें छोटे–छोटे गोल मनके बनाए गए हैं।[15]

हड़प्पा से भी एक स्त्री की मृण्मूर्ति आकृति प्राप्त हुई है जिसने भी गले से चिपका कण्ठहार वह तीन पट्टियों वाला नाभि तक वस्त्रनुमा हार पहना हैं जिसके अन्तिम झोर पर पेंडेंट भी अलंकृत है। इस प्रकार हम कह सकते हैं हड़प्पा व मोहनजोदड़ों से प्राप्त सभी मृण्मूर्तियों धारण गले के आभूषण अत्यन्त सरल रूप में अलंकृत किए गए हैं। जिनको पट्टियों के रूप में बनाया गया है वह अलंकृत हेतु पेंडेंट व मनकों का प्रयोग किया गया है।

हस्ताभूषण

अधिकांश आकृतियों के खण्डित होने के कारण हाथ में पहने जाने वाले आभूषणों की विषेश जानकारी प्राप्त नहीं होती है। केवल कुछ आकृतियों में ही बाहु या कलाई पर आभूषण दिखायी देते हैं। मोहनजोदड़ो से प्राप्त योगी की मूर्ति को भी भुजबन्ध पहने दर्शाया गया है। जिस पर गोल छल्ले के आकार का अलंकरण है। मृण्मूर्तियों में भुजबन्ध नहीं दिखायी देते हैं। सम्भवतः यह आभूषण कुछ विषेश वर्गों में ही प्रचलित थे।

मोहनजोदड़ों से सोने, चाँदी, काँसा, ताँबा, सीप, मिट्टी आदि के बने कंगन के उदाहरण मिलते हैं। यह कंगन रंगीन तथा अलंकृत भी होते थे। सोने के कंगन सोने के पत्तर से बनाये जाते थे जिसके जोड़ कंगन के अन्दर की ओर छिपे रहते थे। चाँदी के भी ऐसे ही कंगन प्राप्त हुए हैं। मनकों से भी कंगन बनाये जाते थे। काँसा तथा ताँबा के कंगन अधिकांश मोटे तार से बनाये गये हैं जिनके सिरे कुछ में खुले और कुछ में एक–दूसरे से मिले हुए हैं। मिट्टी के कंगन बहुत प्रचलित थे, किन्तु इनमें सुन्दरता का अभाव है। सम्भवतः यह कंगन सामान्य लोगों द्वारा पहने जाते थे। मिट्टी के कुछ कंगन बहुत पकाये हुए हैं जो बाहर से काले या गहरे भूरे रंग के और भीतर से हल्के भूरे रंग के हैं। ये कंगन इतने अधिक पकाये गये हैं कि बजाने पर इनमें से धातु जैसे ध्वनि आती है। मिट्टी के कंगन अधिकांश खण्डित रूप में मिलते हैं।[16]

संदर्भ

1. आचार्य, भावना. (1995). प्राचीन भारत में रूप श्रृंगार. जयपुर. पृष्ठ **99.**
2. गुप्ता, नीलिमा. (2010). भारतीय लोक कला (छत्तीसगढ़ के सन्दर्भ में). दिल्ली. पृष्ठ **100.**
3. पाटिल, अशोक. (1998). डी भील जनजीवन संस्कृति. मध्य प्रदेश. पृष्ठ **23.**
4. गुप्ता, नीलिमा. (2010). भारतीय लोक कला (छत्तीसगढ़ के सन्दर्भ में). दिल्ली. पृष्ठ **100, 101.**

5. (2017). कोठारी गुलाब गहने क्यों पहने? पत्रिका प्रकाशनः पृष्ठ **32.**
6. आचार्य, भावना. (1995). प्राचीन भारत में रूप श्रृंगार. जयपुर. पृष्ठ **25.**
7. Mackay, J.H. (1943). Chanhudero. Excavation 1935-36 V01-20 American oriental Society 1943 Page No-190.
8. Mackay, E.J.H. (1938). Further Excrvation at monejo daro 1927-1931. Delhi. Vo 12. Pg. **409.**
9. (1996). Marsh are John Mohenjo-daeo and the Indus Civilization. New Delhi. Pg. **41-42.**
10. (1987). गिरिकमल : भारतीय श्रृंगार वराणसी. पृष्ठ **203.**
11. Sanketion H.D Pre Hirtoric Art in India. New Delhi. Fig No-22.
12. (1987). गिरिकमल : भारतीय श्रृंगार वराणी. पृष्ठ **205.**
13. वही. पृष्ठ **205, 206.**
14. Sharma, Deo Prakash. (2007). Harappan Art. Delhi. Pg. **135,141,148.**
15. Chandra, R.G. (1964). Studies in the Development of Ornaments and Jewellery in Proto-historic India. Varanasi.
16. Sharma, Deo Prakash. (2007). Herappan Art. Delhi. Pg. **155.**